उत्तरप्रदेश की पाठ्यपुस्तकें : साहित्यिक अवलोकन

❑ कमलेश चन्द्र जोशी

प्रारंभिक स्तर के बच्चों के लिए भाषा की पाठ्यपुस्तकें तैयार करने का मुख्य उद्देश्य बच्चों के भाषायी कौशलों के विकास के साथ-साथ उनमें साहित्य बोध विकसित करना भी होता है। भारतीय शैक्षिक परिदृश्य में पिछले एक दशक से विभिन्न राज्यों में प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार हेतु विभिन्न तरह के कार्यक्रम चलाए जाते रहे हैं। जिनमें जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डीपीईपी) एक प्रमुख कार्यक्रम रहा है। इस कार्यक्रम के दौरान विभिन्न राज्यों में नवीन पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया गया है। इन पाठ्यपुस्तकों के बारे में यह कहा जाता रहा है कि इन पाठ्यपुस्तकों को तैयार करने में बाल केन्द्रियता, लैंगिक समता, धर्मनिरपेक्षता आदि मूल्यों को ध्यान में रखा गया है। उत्तर प्रदेश में भी इसी कार्यक्रम के दौरान पाठ्यपुस्तकें तैयार की गई थी। इस आलेख में भाषा की पहली से आठवीं कक्षा तक की पाठ्यपुस्तकों, भाषा किरण का अवलोकन कर इसमें शामिल साहित्य को बच्चों की दृष्टि से आकलित करने का प्रयास किया गया है।

पाठ्यपुस्तक निर्माताओं की पाठ्यपुस्तकें तैयार करने की अपनी एक तयशुदा दृष्टि होती है। पाठ्यक्रम निर्माता इसे कक्षा व बच्चों के स्तरानुसार एक पदानुक्रमिक रूप में तैयार करते हैं। जिसमें भाषा की पाठ्यपुस्तकों के अन्तर्गत साहित्य की सारी विधाओं - कविता, कहानी, नाटक, निबन्ध, रिपोर्ताज, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, पत्र आदि से बच्चों को परिचित करवाना चहते हैं । इसके साथ ही साहित्य के आदि काल से आधुनिक काल तक के कवि, रचनाकारों को उसमें शामिल करना आवश्यक समझते हैं। चाहे वह बच्चों की दृष्टि से सुग्राह्य हो या न हो। इसके कई उदाहरण हमें चौथी कक्षा से ही भक्ति काल व छायावाद की बच्चों के लिए अमूर्त अवधारणाओं वाली कविताओं में मिल जाते हैं। ये कविताएं बच्चों के लिए बहुत अर्थपूर्ण नहीं होतीं और बच्चों के लिए शब्दों के छलावों को ही व्यक्त करती हैं। ये रचनाएं बच्चों की कल्पनाशीलता व सोच पर कोई प्रभाव नहीं डालती; न ही इनसे बच्चों में कोई काव्यदृष्टि ही विकसित हो पाती है। इस तरह एक तय रेखिक क्रम में कहीं न कहीं बच्चों का स्थानीय परिवेश, भाषा-बोली, संस्कृति से जुड़ी रचनाएं हाशिए पर रह जाती हैं। जिनसे बच्चा अपना सघन तादात्मय बना सकता है। इसी तरह से यह भी देखने में आता है कि अधिकांश पाठ्यपुस्तकों की रचनाएं कुछ पहले से आरोपित नैतिक मूल्यों जैसे कि राष्ट्रभक्ति, ईशभक्ति आदि से ओत-प्रोत होती हैं । ये बच्चों के लिए कोई सार्थक संदर्भ, संवेदनशीलता व अनुभव नहीं प्रदान कर पातीं जो बच्चों के मनोजगत से जुड़ सकें और वे रचना से अपनी आत्मीयता बना सकें।

भाषा किरण शृंखला की पाठ्यपुस्तकों पर गौर करें तो हम पाएंगे कि पाठ्यपुस्तकों में रचनाओं को चयनित करने का एक अच्छा प्रयास किया गया है। इसके अंतर्गत पाठ्यपुस्तकें भारत के विभिन्न राज्यों के प्रसिद्ध साहित्यकारों की रचनाएं, लोककथाएं, आदि को स्थान दिया गया है। पाठ्यपुस्तकों में पूर्व की पाठ्य पुस्तकों के बनिस्पत कई प्रगतिवादी रचनाओं को प्रश्रय दिया गया

है तथा नवीन सामाजिक मूल्यों जिसमें लैंगिक समता के दृष्टिकोण को रखने वाली रचनाएं बाल मन के अनुभवों को संजोने वाली रचनाएं, समाज के आमजन पर केन्द्रित रचनाओं को जगह मिली है। जो बच्चों को अपने परिवेश, समाज के प्रति एक संवेदनशील रचनात्मक परिप्रेक्ष्य देने में सक्षम हैं। यह बात दीगर है कि कक्षा में शिक्षक इसका ट्रीटमेंट किस तरह करता है ? उसकी बच्चों को साहित्य पढ़ाने की समझ क्या है ? आदि प्रश्न विचार करने के हैं। सर्वप्रथम विचारणीय प्रश्न है जब दूर-दराज के प्राथमिक विद्यालयों में पर्याप्त शिक्षक ही नहीं हैं तो बच्चों के सीखने-सिखाने की क्या उम्मीद करें ? यह एक ज्वलंत मुद्दा है और खासकर उत्तर प्रदेश के संदर्भ में जहां छात्र, शिक्षक अनुपात लगभग 1:80 का है। यहां इस ओर इशारा भर किया गया है कि बच्चों में पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से सामाजिक सरोकार तभी प्रस्फुटित होंगे जब उन्हें विद्यालय में ऐसे मौके मिलें और इसमें पाठ्यपुस्तकें व उसके परिप्रेक्ष्य और सीखने-सिखाने की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। आगे हम पाठ्य पुस्तकों की सामग्री पर गौर करेंगे।

प्राथमिक विद्यालयों की शुरूआती दो कक्षाओं के बच्चों पर नजर डालें तो इस स्तर के बच्चे अपने घर-परिवार परिवेश से प्राप्त बोलचाल की भाषा के अनुभवों को लेकर विद्यालय आते हैं। पहली बार स्कूल में आने वाले बच्चे शब्दों के अर्थ और उनके प्रभाव से परिचित होते हैं। लिखित चिह्न और उनसे जुड़ी ध्वनियां बच्चों के लिए इस स्तर पर अमूर्त होती हैं। इसलिए जरूरी होता है कि पढ़ने की शुरूआत अर्थ से ही हो और वह भी किसी उद्देश्य के लिए। यह उद्देश्य कहानी सुनकर व पढ़कर आनन्द लेने का हो सकता है। जबकि देखा यह जाता रहा है कि अधिकांश प्रचलित शुरूआती पाठ्यपुस्तकों में बच्चों की पाठ्यसामग्री बहुत ही यांत्रिक होती है और इसका उद्देश्य अर्थ या आनन्द के लिए पढ़ना न होकर केवल शब्दों व अर्थहीन वाक्यों को दुहराना भर ही होता है और कक्षाओं में शिक्षक इस तरह के अभ्यास कराते-कराते अपना काफी समय गुजार देते हैं। जिससे बच्चों के हाथ कुछ नहीं लगता और उनमें पढ़ने के प्रति रुचि की बजाय अरुचि हो जाती है। इस दृष्टि से देखें तो इन पाठ्यपुस्तकों की सामग्री से कुछ संतोष किया जा सकता है।

पहले व दूसरे दर्जे के कुछ पाठ जैसे 'दुलारी की गागर', 'नाव चली', 'किसान की होशियारी' आदि बच्चों की दृष्टि से उपयुक्त लगती है। 'दुलारी की गागर', में बालिका का चरित्र मुख्य रूप से उभरा है। कहानी में वह भोलू के साथ नदी पर पानी भरने जाती है। इस तरह से लैंगिक समता की बात को रखने का प्रयास भी दिखाई पड़ता है। लेकिन इसके चित्र में गागर दुलारी के हाथों में ही दिखाई गई है। इसे देखते हुए हमें अपने समय की इसी कक्षा की पाठ्यपुस्तक की कुछ पंक्तियां सहज ही याद हो जाती हैं - दिन निकला। विमला उठ। गगरी ला। पानी भर। राम उठ। किताब पढ़। यह याद आने का तात्पर्य यह है कि लैंगिक विषमता किस तरह से पाठ्यपुस्तकों में दिखाई पड़ती थी कि विमला पानी लाएगी व राम किताब पढ़ेगा। वर्तमान समय में लैंगिक समता की बात को काफी जोरदार ढंग से रेखांकित किया जा रहा है लेकिन शायद अभी यह हमारे मन में इंटर्नलाइज नहीं हुआ है और कहीं न कहीं यह दिखाई पड़ ही जाता है। चाहे चित्र में या किसी टैक्स्ट में।

आगे इस कहानी में एक समस्या रखी गई है कि नदी में गागर एक मगर के मुंह में अटक जाती है तो गागर निकालने की तरकीब क्या हो ? इस पर यह चित्र कथा केन्द्रित है और इसका हल एक बाल सुलभ गतिविधि के द्वारा होता है जब दुलारी और भोलू आक छी करते हैं और वैसा ही मगर भी करता है और गागर छूट जाती है। इस प्रकार यह कहानी सहज रूप से समाप्त होती है। इसके साथ ही कहानी बच्चों को मगर के मुंह से गागर छुड़ाने की और तरकीबें सोचने का मौका देती है। । पर यह शिक्षक का काम है कि वह कक्षा में क्या इस तरह के मौके बच्चों को प्रदान करता है ? 'नाव चली' नाम की रचना जो वी. सुतयेव रूसी चित्रकथा का हिन्दी रूपान्तरण है और बच्चों को आकर्षित करने वाली है। इस कहानी में पांच पात्र मेंढक, चूजा, चींटी और गुबरैला घूमने के लिए निकलते हैं। लेकिन वे एक झील के पास जाकर फंस जाते हैं क्योंकि मेंढक के सिवाय किसी को तैरना नहीं आता है और वह उनका मजाक उड़ाता है लेकिन सभी लोग मिलकर अखरोट, पत्ते, सरकण्डे और धागे की मदद से एक नाव बनाते हैं और नदी पार करते हैं। इस तरह यह कहानी परोक्ष रूप से परस्पर सहयोग का मूल्य देती है और इसके साथ ही बच्चों के 'कबाड़ से जुगाड़' की प्रवृत्ति को दिखाती है। बच्चे इस तरह के क्रियाकलाप करते हुए आसानी से ग्रामीण, कस्बाई क्षेत्रों में देखे जा सकते हैं। 'किसान की होशियारी' नामक कहानी एक भारतीय सामाजिक संदर्भ में बिल्कुल सटीक बैठती है। यह एक लोककथा से उभरी हुई कहानी है और बच्चों के लिए सहज व उपयुक्त है। यह एक अर्थपूर्ण पाठ है।

पाठ्यपुस्तक की कुछ रचनाओं की शुरूआत तो अच्छी हुई है लेकिन बाद में पटरी से उतर गई है। जैसे भाषा किरण भाग-2 के पाठ नन्हां चांद की शुरूआती पंक्तियां देखें - गर्मियों की रात थी। साबिर और सना अपने अब्बू और अम्मी के साथ छत पर बैठे थे। आकाश में चांद निकला। गोल-गोल थाली जैसा। साबिर खुश हुआ। इन शुरूआती पंक्तियों में कहानी आकर्षित करने की कोशिश करती है लेकिन आगे जब साबिर सना से कहता है, ''देखो

चांद कैसे चमक रहा है ? वहां कौन रहता होगा ?'' सना बोली, ''चांद पर न तो हवा है, न पानी। वहां सांस भी नहीं ली जा सकती। इसलिए वहां कोई नहीं रहता।'' आगे की कहानी में वे अपने अम्मी के पास जाते हैं और अम्मी उन्हें चांद के बारे में बताती है। जैसे चांद हमारी धरती के चारों ओर चक्कर लगाता है। धरती से कुछ लोग रॉकेट पर बैठ कर चांद पर गए आदि बातें। यहां मुश्किल इस बात की है कि कक्षा 2 के स्तर में इस तरह की अवधारणा क्या बच्चों को ग्राह्य होगी और इस तरह से यह पाठ केवल एक नीरस तथ्यपरक जानकारी तक ही सीमित रह जाता है और बच्चों पर कोई प्रभाव नहीं छोड़ता।

कक्षा 1 व 2 की पाठ्यपुस्तकों में सर्वप्रथम कविताओं की शुरूआत राष्ट्रभक्ति व ईशभक्ति के मूल्यों को लेकर हुई है। कक्षा 1 में भारत प्यारा व कक्षा 2 में 'जिसने सूरज, चांद बनाया' जो कि हमारे समय से ही पाठ्यपुस्तकों में शामिल थीं, आज भी विद्यमान है और बच्चों को आकर्षित नहीं करती और ऐसी कविताओं का पहली व दूसरी कक्षाओं में होना पाठ्यपुस्तक निर्माताओं की समझ में अस्पष्टता ही दर्शाता है। कक्षा 1 की ही पाठ्यपुस्तक में कविता 'हुआ सवेरा' बच्चों को कुल्ला करने, मंजन करने, साफ रहने, मुंह धोने आदि की सलाह देती है और बच्चों से कोई भावनात्मक संबंध स्थापित नहीं कर पाती जबकि कक्षा 2 की पुस्तक में राम नरेश त्रिपाठी की कविता 'नन्दू का जुकाम' बच्चों की कल्पनाशीलता को बढ़ाने में सक्षम है और उनके लिए एक नया बिम्ब भी रचती है। यह कविता बच्चों के लिए उपयुक्त लगती है।

इसी तरह से 'मगर का घर', 'मेला', 'गांव', आदि पाठ आरोपित लगते हैं जिसमें कोई सहजता व सरसता नजर नहीं आती। जो बच्चों को पढ़ने का आनन्द दे सके। इसमें 'मगन का घर' व 'गांव नामक पाठ गांव की अच्छाइयों को कृत्रिम रूप से दिखाते हैं और बच्चों में पढ़ने की उत्सुकता जगाने में पीछे छूट जाते हैं। इसी तरह 'मेला' पाठ में बच्चों के मेला जाने का वर्णन है लेकिन एक सपाट रूप से और यह पढ़कर आनन्द लेने का कोई भाव नहीं छोड़ता।

तीसरी से पांचवीं तक के आयुवर्ग के बच्चों के मानसिक विकास पर गौर करें तो हम पाएंगे कि इस आयुवर्ग के बच्चे स्कूल व इसके वातावरण से भली-भांति परिचित हो जाते हैं स्कूल का वातावरण उन्हें अपने साथियों के साथ अपने स्थानीय परिवेश, इतिहास व संस्कृति से परिचित करवाता है। वे अपने आसपास के परिचित पात्रों और आसपास की दुनिया से संबंधित कथावस्तु में रुचि लेने लगते हैं। इसलिए जरूरी होता है कि उनके लिए सामग्री ऐसी हो जो उनके परिवेश व समाज के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ाए तथा उनमें मनोरंजन व कौतूहल पैदा करे। बजाए इसके कि उन्हें जबरन कुछ तय मूल्यों द्वारा आरोपित करे और पढ़ने को एक नीरस गतिविधि बनाएं। भाषा किरण की तीसरी से पांचवीं कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों की गद्य रचनाओं में तीसरी कक्षा में हिन्दी के प्रसिद्ध कवि स्वर्गीय सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की बाल कथा 'मुर्गा और लोमड़ी' पर दृष्टि डालनी होगी। यह बाल कथा बच्चों के लिए सीधे-सीधे तो कोई मूल्य नहीं छोड़ती और एक सहजता के साथ समाप्त होती है। इस कहानी की मुख्य पात्र एक लोमड़ी है। लोमड़ी की चालाकी को लेकर बचपन में कई तरह की कहानियां पढ़ते रहे हैं। अगर याद करें तो हमारे समय में भी कुत्ते और लोमड़ी को लेकर एक कहानी थी जिसमें कौवे का गाना सुनने के बहाने उसकी गिरी हुई रोटी को लेकर लोमड़ी भाग जाती है और अपने चालाक होने के गुण को स्थापित करती है। इसी तरह इस कहानी में भी एक मुर्गा पेड़ की डाल पर बैठा हुआ होता है तो लोमड़ी पूछती है, ''तुम डाल पर क्या कर रहे हो ? मुर्गे को तो जमीन पर चलते-फिरते रहना चाहिए ।'' तो मुर्गा कहता है, ''मैं खूंखार जानवरों के डर से बैठा हूं।'' लोमड़ी चालाकी से कहती है, ''अरे क्या तुमने आज का सबसे बड़ा समाचार नहीं सुना ? सभी पशु-पक्षियों में समझौता हो गया है । अब कोई किसी पर हमला नहीं करेगा।'' तो मुर्गा कहता है, ''यह तो वास्तव में दुनिया का सबसे अच्छा समाचार है।'' कहते-कहते उसने अपनी गर्दन उठा कर इस तरह देखा जैसे कोई दूर की चीज देख रहा हो । इस पर लोमड़ी पूछती है, ''क्या देख रहे हो ?'' मुर्गा बोला, ''कुछ नहीं। पता नहीं क्यों कुछ भयानक शिकारी कुत्ते तेजी से इस ओर दौड़े चले आ रहे हैं ?'' इस तरह से लोमड़ी उसकी यह बात सुनकर चुपचाप वहां से खिसकने की योजना बना लेती है । और जब मुर्गा पूछता है, ''अरे ! तुम घबरा क्यों रही हो ? तुम्हें क्या डर है ? पशु-पक्षियों में समझौता हो गया है न।'' लोमड़ी बोली, ''परन्तु लगता है कि कुत्तों ने अभी यह समाचार नहीं सुना है।'' इस तरह से लोमड़ी अपनी चालाकी को स्थापित करते हुए वहां से निकल लेती है। यहां बात नोट करने की है कि लोमड़ी चालाक है लेकिन मुर्गा भी कुछ कम नहीं । इस रचना की एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस रचना के मूल्य सहज रूप से रचना में गुंथे हुए हैं, कहीं से आरोपित नहीं हैं। लोमड़ी चालाक है और वह मुर्गे को खाना चाहती है लेकिन मुर्गा भी कम चालाक नहीं है। वह भी उसकी चालाकियों का सुलझा हुआ जबाव देता है और अपनी चालाकी भी स्थापित करता है और कहीं न कहीं लोमड़ी के चालाक होने के मिथ को चुनौती देता है। कुल मिलाकर काफी अच्छी तरह से बुनी गई कहानी है और बच्चों से बातचीत करने की काफी गुंजाइश छोड़ती है।

तीसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक का पाठ 'तालाब में चांद' बच्चों के लिए चित्रकथा है। उसमें बंदर हैं और चांद है। कहानी यह है कि बंदर तालाब में चांद की परछाई को देखते हुए उसे पकड़ना चाहते हैं। इस पकड़ने के उपाय खोजने में वे अलग-अलग तरीके लगाते हैं। कहानी में दो तरीकों का जिक्र किया गया है तथा अंत में कहानी खुली (ओपेनएंडेड) छोड़ दी गई है जिसमें बच्चों को आगे खुद नए तरीके सोचने का मौका मिले। इस कहानी से एक बात और समझ में आती है कि चांद को पकड़ना बंदरों के लिए एक फंतासी है क्योंकि वास्तव में बंदर कितने भी तरीके बना लें ? लेकिन वे चांद को पकड़ नहीं सकते। लेकिन अगर कहीं कुछ यथार्थ जुड़ा हुआ हो जिससे बंदर वास्तव में कुछ तरीकों के द्वारा उस चीज को पकड़ सकें तो कैसा रहेगा ? यह प्रश्न भी 'खुला' है और सोचने-विचारने के लिए आगे खुला हुआ है क्योंकि यह बात तो समझ में आती है कि बच्चों को स्वयं सोचने व अपने तरीके बनाने का मौका मिले, उन्हें इसके कुछ आधार मिल सकें। यह समस्या समाधान से जुड़ा हुआ है। लेकिन अगर प्रयास करने पर कुछ हासिल नहीं हो तो यह बात समझ में नहीं आती।

तीसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक के पाठ 'बापू की सीख' जो गांधी जी को लेकर रची गई है और उसका गद्य बच्चों के लिए आरोपित गद्य लगता है। इस आरोपण की वजह यह है कि कहानी में बच्चों को गांधी जयन्ती के बारे में बताने और उससे कुछ सीख देने का आग्रह पढ़ने से ही प्रकट हो जाता है और अंत में कहानी सीख पर पहुंच जाती है। जब वैभव से कहानी सुनकर उसकी मां कहती है, ''हां बेटा, ऐसे थे बापू। जो वे कहते थे पहले स्वयं करते थे। तभी तो पूरा देश आजादी की लड़ाई में बापू के साथ चल पड़ा।'' इस तरह पाठ मुख्य रूप से उपदेश देने तक सीमित हो जाता है।

इसी पुस्तक में पंचतंत्र की कहानी 'बातूनी कछुआ' का पूर्व लेखन कर 'घुमक्कड़ कछुआ' नामक पाठ तैयार किया गया है। जिसमें तारक नामक कछुए को दोनों हंस अपनी चोंच में सींक के सहारे आसमान की सैर कराते हैं और समुद्र में फौव्वारे को देखते हुए कछुआ के चोंच से सींक छूट जाती है और वह समुद्र में गिर जाता है। उससे समुद्र की सैर करवा दी जाती है और बच्चों को समुद्र के बारे में बतलाने का प्रयास किया जाता है। हालांकि यह कोई कहानी नहीं है, लेकिन यह समझ में नहीं आया कि कुछ कछुए तो समुद्र में भी रहते हैं तो उसे समुद्र की सैर क्यों करवाई गई ? अगर बच्चों को समुद्र के बारे में जानकारी देनी ही थी तो और भी तरीके हो सकते थे जिनसे बच्चे जुड़ सकें।

किताब में ऑस्कर वाइल्ड की कहानी का हिन्दी अनुवाद 'घमंडी का बाग' भी दी गई है। इसमें बच्चों के बाग में खेलने और बड़ों के द्वारा उन्हें खेलने से मना करने के सहज प्रवृत्ति को उभारा गया है। कुल मिलाकर इस पाठ का बच्चों के लिए अच्छे विदेशी साहित्य से परिचय के रूप में देख सकते हैं।

कविताओं के अंतर्गत स्वर्गीय निरंकार देव सेवक की कविता 'भारत है मेरा घर' तीसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक में रखी गई है। यह कविता बच्चों की कल्पनाओं से अलग-थलग मालूम पड़ती है। इसमें कविताओं के माध्यम से भारत की सैर कराई गई है। पाठ्यपुस्तक में सुभद्रा कुमारी चौहान जिनकी 'हम कदम्ब का पेड़' व 'खूब लड़ी मर्दानी' नामक कविताओं से भलीभांति परिचित हैं। उनकी एक कम पढ़ी हुई कविता 'बादल किसके काका' तीसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक में सम्मिलित है जिसमें बच्चों की कल्पना को साकार रूप दिया गया है। इसकी दो पंक्तियां देखें -

''अभी-अभी थी धूप, बरसने लगा कहां से यह पानी,
किसने फोड़ घड़े बादल के, की है इतनी शैतानी।''

यह कविता बच्चों को पढ़ने-सुनने में ताजगी दे सकती है।

दिविक रमेश की कविता 'अगर पेड़ भी चलते होते' तीसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक में जो बच्चों की सहज कल्पना और बिम्बों से भरपूर है। बच्चे इस कविता को पढ़कर इस पर बातचीत करके आनन्द ले सकते हैं। आगे यह काम करना जरूरी है कि शिक्षक इसको अपनी कक्षा में कैसे टेकल करता है ? यह अक्सर होता है कि कभी-कभार अच्छी सामग्री पाठ्यपुस्तकों में होते हुए अच्छी तरह से काम नहीं हो पाता। पाठ्यपुस्तक में रामधारी सिंह दिनकर की 'चांद का कुर्ता' नामक कविता भी मौजूद है जिसे हम अपने बचपन में पढ़ चुके हैं। यह अपने पारंपरिक बिम्बों को ही प्रदर्शित करती है।

चौथी कक्षा की पाठ्यपुस्तक में दक्षिण के बाल साहित्यकार शंकर जिनकी चिल्ड्रेंस बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तकें 'ननिहाल में गुजरे दिन' 'महागिरी' और 'बुढ़िया की रोटी' बच्चों के बीच शौक से पढ़ी जाती हैं तथा बच्चों के लिए लिखने वालों का मार्गदर्शन करती हैं। उनकी कहानी 'किस्मत का खेल' पाठ्यपुस्तक में शामिल की गई है। जिसमें बच्चों के मेला घूमने के अनुभव को अच्छी तरह चित्रित किया गया है। मेला जो हमारे देश की सांस्कृतिक परम्पराओं के गहरे से जुड़ा है और बच्चों के लिए इसका काफी महत्त्व है। इसकी पृष्ठभूमि प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानी 'ईदगाह' की है। शंकर की इस कहानी के माध्यम से बचपन के

अनुभव व उसकी कल्पना गहरे अर्थ पाते हैं और बच्चों को अच्छा पढ़ने के अपने अनुभव को जोड़ने का स्वाद भी दे जाते हैं। इसी के साथ आर. के. नारायण की पुस्तक 'स्वामी और उसके दोस्त' का एक अंश 'पिताजी का कमरा' भी पाठ्यपुस्तक में रखा गया है। इसे पढ़कर बच्चे अच्छे गद्य का आनन्द ले सकते हैं। पुस्तक में रस्किन बांड की कहानी 'वन देवी और राजा' भी शामिल है। जिसमें पर्यावरण के बारे में चिन्ता जताई गई है लेकिन इसका निवारण बहुत कृत्रिम तरीके से किया गया है जो पढ़ने के उपरांत कोई असर नहीं छोड़ता। जैसा असर हम शेल सिल्वरस्टाइन की रचना 'दानी पेड़' को पढ़कर पाते हैं। कहानी में पेड़ काटने से पहले वन देवी का प्रकट हो जाना उसका दर्शन देना, राजा का हृदय परिवर्तन हो जाना बहुत प्रभावकारी नहीं लगता। कहानियों के पीछे के इसी दृष्टिकोण के तहत पंचतंत्र की कहानी 'पंचतंत्र की कथा' दी गई है जिसमें राजाओं के चारों पुत्र एक मरे हुए शेर को जीवित करते हैं। जिसमें शेर तीन पुत्रों को खा जाता है और अंत में एक बचता है। इसमें भी यह स्पष्ट नहीं होता कि इस तरह के पाठ से बच्चों को क्या बताना चाहते हैं ?

प्राथमिक स्तर की अन्य रचनाओं में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की आत्मकथा का अंश 'मेरी शिक्षा' आम भारतीय ग्रामीण परिवेश की महक लिए हुए है व बच्चों के लिए एक सरस व आनन्ददायक पाठ है। जिसे पढ़कर बच्चे पढ़ने का आनन्द ले सकते हैं। इसी तरह यात्रा वर्णन के अंतर्गत प्रसिद्ध साहित्यकार राहुल सांकृत्यायन की रचना 'किन्नौर देश की ओर', जवाहर लाल नेहरू का पत्र 'पिता का पत्र पुत्री के नाम' आदि रचनाएं बच्चों को साहित्य की अन्य विधाओं से परिचित कराती हैं।

कविताओं में जिस बात की आशंका पहले जतलाई गई थी उनमें 'भक्ति नीति माधुरी' चौथी व पांचवी कक्षाओं में शामिल हैं इसी तरह छायावादी दृष्टिकोण की कविताएं द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी के 'पथ मेरा आलोकित कर दो' में कवि कहता है कि -

पथ मेरा आलोकित कर दो।
नवलप्रात की नवल रश्मियों से
मेरे उर का तम हर दो॥

उक्त पंक्तियों में चौथी कक्षा के बच्चों के लिए नवल प्रात, नवल रश्मि व उर का तम जैसी शब्दावली व उसके परिप्रेक्ष्य तक पहुंच पाना बहुत मुश्किल है। इसी तरह पांचवीं कक्षा में जयशंकर प्रसाद की कविता 'विमल इन्दु की विशाल किरणें' शामिल हैं । इसकी निम्न पंक्तियां देखें -

तुम्हारा स्मित हो जिसे निरखना
वो देख सकता है चन्द्रिका को।
तुम्हारे हंसने की धुन में नदियां
निनाद करती ही जा रही हैं॥

उक्त पंक्तियां भी पांचवीं कक्षा के बच्चों की समझ से बाहर हैं। कुल मिलाकर देखा जाए तो इस तरह की कविता प्राथमिक स्तर के बच्चों के लिए उपयुक्त नहीं लगतीं और न ही वे बच्चों में कोई उत्सुकता जगा पाती हैं। सबसे मुश्किल होता है कि इसके संदर्भ को पकड़ पाना, उसके स्तर तक पहुंच पाना जो इस स्तर के बच्चों के लिए काफी मुश्किल है और जबकि हम सीखने के 'रचनावादी' नजरिए की बात करते हैं। जिसके अंतर्गत बच्चा खुद अर्थ निर्मित करे। तब और मुश्किल लगता है। इसलिए जरूरी लगता है कि बच्चों के लिए कविताएं ऐसी हों जिनके सामाजिक संदर्भ को पकड़कर बच्चे अर्थ निकाल सकें। उनमें एक काव्य दृष्टि विकसित हो सके।

छठी से आठवीं कक्षा के बच्चों में उनकी मानसिक क्षमताओं के विकास के साथ-साथ उनकी सामाजिकता भी बढ़ जाती है। उनका अपने समाज, संस्कृति के प्रति एक परिप्रेक्ष्य बनने लगता है। अब वे केवल नितांत कल्पनाओं में ही नहीं विचरण करते हैं और जीवन और समाज के अंतर्सम्बंधों को तार्किक रूप से समझने लगते हैं। अब वे समस्याओं का विवेकपूर्ण उत्तर चाहते हैं तथा चीजों को एक वैज्ञानिक तरीके से समझने की कोशिश करते हैं इसलिए जरूरी होता है कि इस आयु वर्ग के बच्चों के लिए रचनाएं उनकी अभिरुचियों, समस्याओं, अनुभवों पर दृष्टिपात करते हुए उनमें एक संवेदनशील, प्रेरक व सूझबूझ की भावना जागृत करे। इस आयु वर्ग के बच्चों के लिए रुचि के अनुसार पाठ्यपुस्तकों में कहानी कविता के अलावा साहसिक रोमांचकारी व खोजपूर्ण रचनाओं से उन्हें परिचित करवाया जा सकता है। जिससे उनमें आत्मविश्वास के साथ-साथ एक समालोचनात्मक दृष्टिकोण भी पैदा हो।

भाषा किरण की छठी, सातवीं व आठवीं की पाठ्यपुस्तकों में प्रेमचन्द की 'हार की जीत', जयशंकर प्रसाद की 'छोटा जादूगर', मोहन राकेश की 'वारिस', सियाराम शरण गुप्त की 'काकी' फणीश्वरनाथ रेणु की 'पहलवान की ढोलक' आदि रचनाएं आज के उपभोक्तावादी समय में बच्चों को प्रेरक, संवेदनशील व एक सम्यक् दृष्टि देती हैं। वर्तमान समय में जिन सामाजिक मूल्यों - समता, न्याय, संवेदनशीलता, जागरूकता, लैंगिक समानता,

ईमानदारी आदि को पुनर्स्थापित करने की जरूरत है ये रचनाएं उसकी वाहक हैं। इसी तरह कविताओं में सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की कविता 'भिक्षुक', केदारनाथ सिंह की कविता 'पात नए आ गए' व सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की कविता 'बिटिया के लिए' भी पाठ्यपुस्तकों में रखी गई हैं। जो कि किशोर बच्चों के लिए उपयुक्त हैं। इसे वे आसानी से समझ सकते हैं और अपने सामाजिक व सांस्कृतिक यथार्थ से ही जोड़ सकते हैं और एक नई काव्य दृष्टि भी पा सकते हैं। छठी कक्षा में प्रसिद्ध उपन्यासकार श्रीलाल शुक्ल का हाल के वर्षों में प्रकाशित बाल उपन्यास 'बब्बर सिंह और उसके साथी' को भी रखा गया है। जो कि किशोर बच्चों के मनोभावों को ध्यान में रखकर ही लिखा गया है और पाठ्यपुस्तक को समृद्ध करता है।

अन्य रचनाओं में महादेवी वर्मा का रेखाचित्र 'सोना', धर्मवीर भारती का निबन्ध 'रॉकेट', शरद जोशी का व्यंग्य 'जिनके हम मामा हैं', चेखव की कहानी 'गिरगिट', रवीन्द्रनाथ टैगोर का 'स्त्री का पत्र', सुभाषचंद्र बोस और भगत सिंह के पत्र भी पाठ्यपुस्तकों में शामिल किए गए हैं। ये रचनाएं हिन्दी जगत का विविध परिदृश्य बच्चों के सामने रखने में सक्षम हैं। इन रचनाओं को देख कर पाठ्यपुस्तकों के निर्माण में एक आधुनिक दृष्टि दिखाई पड़ती है। जिससे यह कहा जा सकता है कि पाठ्यपुस्तकों के सुधार में कुछ कदम आगे बढ़ा गया।

पूर्व की पाठ्यपुस्तकों में जहां लैंगिक असमानता आसानी से देखी जा सकती थी। लेकिन इन पाठ्यपुस्तकों में इस बात का काफी ध्यान रखा गया है और पाठ्यपुस्तकों की कई रचनाओं में यह बात आसानी से दिख जाती है। जिसमें बालिका के पात्र प्रभावशाली ढंग से उभरे हैं। चाहे वह महाश्वेता देवी की कहानी 'क्यों-क्यों लड़की' की मुख्य पात्र मोइना जो कि एक शबर जाति की आदिवासी लड़की है, जो बात-बात में प्रश्न पूछती है। नई चीजों को जानना व समझना चाहती है। जिसे बालिकाओं के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण पैदा होता है। इस प्रकार यह कहानी का मूल स्वर बालिका सशक्तिकरण व बराबरी का है। चाहे वह लड़का-लड़की के स्तर पर या जातियों के स्तर पर, यह बात सहज रूप से उभर कर आती है। सातवीं कक्षा की पाठ्यपुस्तक में आशापूर्णा देवी की कहानी 'भविष्य का भय' की मुख्य पात्र तुलतुल का अपने घर में बर्तन मांजने वाली लड़की टुली के प्रति सहज संवेदना को उभारा गया है। यह वर्तमान समय के सामाजिक परिदृश्य के जटिल ताने-बाने को प्रस्तुत करती है। एक समानता की बात को भी इंगित करती है और बच्चों की संवेदनशीलता उभारने की कोशिश करती है। शिवानी की रचना अपराजिता भी पाठ्यपुस्तक में रखी गई है जिसमें एक अपंग लड़की के साहस व जिजीविषा को उभारा गया है। जापानी लेखिका तेत्सुको कुरोयानागीकी की रचना 'तोत्तोचान' का एक अंश 'स्कूल मुझे अच्छा लगा' भी पाठ्यपुस्तक में है। जो बच्चों के लिए रोचक व मनोरंजक है और पढ़ने में अच्छा आनन्द देता है।

अंत में देखा जाए तो शिक्षा में पिछले एक दशक से विभिन्न तरह की सरगर्मियों के चलते पाठ्यपुस्तकों के प्रति सजगता बढ़ी है। कई प्रकार के बदलाव भी पाठ्यपुस्तकों में किए गए हैं। विभिन्न पाठ्यपुस्तकों में विषयवस्तु के चयन के प्रति एक नवीन दृष्टि भी दिखाई पड़ती है। लेकिन दूसरी तरफ यह भी देखने में आता है कि सरकारी विद्यालयों की हालत और बिगड़ी है। आज सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में पांचवीं कक्षा में पढ़ने वाले अधिकांश बच्चे नियमित रूप से विद्यालय नहीं आते, जो आते हैं वे कुछ सीख नहीं पाते, विद्यालयों में पर्याप्त शिक्षक नहीं हैं आदि कारणों से विद्यालय की छवि गिरी है। ऐसे में पाठ्यपुस्तकों में नए परिवर्तन सीखने-सिखाने की विधियों में बदलाव के प्रयास कुछ ताजी हवा के झोंके तो देते हैं। लेकिन जब तक इनकी अनगूंज कक्षा तक नहीं पहुंचती तब तक शिक्षा में महत्त्वपूर्ण बदलाव नहीं आ सकता। इसलिए जरूरी है कि पूरी शिक्षण प्रणाली में सुधार के उपायों पर सोचा जाए। आगे यह बात भी महत्त्वपूर्ण लगती है कि अच्छी सामग्री को पाठ्यपुस्तकों में रखकर ही इति श्री नहीं मान ली जा सकती। जब तक इसको पढ़ाने की दृष्टि न हो। अगर हम किसी भी प्राथमिक/जूनियर विद्यालय में चले जाएं वहां भाषा पढ़ाने का ढंग बहुत कृत्रिम होता है। जिसमें शिक्षक केवल पाठ्यपुस्तकों के अभ्यास पूरे कराने व किसी तरह कोर्स निपटाने को ही आवश्यक समझता है बनिस्पत इसके कि भाषा के प्रति एक समग्र दृष्टि विकसित होने के। पाठ्यपुस्तकों के अभ्यासों में भी अधिकतर प्रश्न तथ्यात्मक होते हैं जो बच्चों को प्रश्नोत्तर याद करने के लिए ही प्रोत्साहित करते हैं, बजाए इनको अपने अनुभव व कल्पना से जोड़ने के। शिक्षक कभी यह बात महसूस नहीं करते कि एक कहानी व कविता को कैसे कक्षा में पढ़ाया जाए। उस पर बच्चों से क्या और कैसे बातचीत की जाए। उसे बच्चों के अनुभव से कैसे जोड़ा जाए ? जिससे बच्चों में अच्छे साहित्य की सराहना करने की दृष्टि विकसित हो। यह सेवापूर्व व सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षणों का विचारणीय मुद्दा है और यह शिक्षक की व्यवसायिक क्षमता से भी ताल्लुक रखता है। इस पर गंभीरता से सोचने-विचारने की जरूरत है। ◆